# <u>भागता</u>

ने देववरी २००२ क

## デッ 10

२२ फरवरी को उम्र के अस्सी बरम पूरे किए हैं। इस मौके पर देश में आधृतिक भारतीय कला के पेरिस-बसे मूर्धन्य कलाकार सैयद हैदर रज़ा खास आयोजन हो रहे हैं। मुंबई और दिल्ली की कलावीथियों में उनके नए और पुराने चित्रों की प्रदर्शनियां आयोजित हैं। पद्म विभूषण दिए जाने की बात भले हमारी कला-विरोधी नीति की भेंट चढ़ गई; फ्रांस की सरकार में कवि-कलाप्रेमी अशोक वाजपेयी की लिखी-संपादित पुस्तक 'रज़ा' का लोकार्पण अपने में एक घटना होगा। उसी पुस्तक में शामिल रज़ा से पेरिस में हुई हफ्तों लंबी बातचीत के प्रमुख अंश हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। साथ उन्हें अपने विशिष्ट सम्मान से नवाज रही है। इसी सप्ताह दिल्ली और मुंबई में रज़ा की अपनी नोटबुक से कुछ इंदराज

मिलती है जिन्हें आप अपने काम में बारे कुछ भी परिकृत या जटिल नहीं है। लेकिन अवधारणाओं और विचारों से प्रेरणा आत्मसात करने या जिनका पनराविष्कार कि आपको प्राचीन भारतीय परंपरा से आड़ सतह पर नहीं, गहराई में। उस काम के बारे में जानना का काम इतना भारतीय लगता है मानो वह पेरिस के अस्तित्व के प्रति उदासीन हो। जिसे आप अपना चरण कहते हैं। अगर आप भारत में होते तो किस प्रकार का काम कर रहे होते ? आपका इधार क्या यह कहना सही है? माहता ह

नहीं। कला की बुनियादी समस्याओं और विशेषत: अपने काम से संदर्भ में मेरी जो समझ टूसरी होती। मुझे पेरिस में खना था, यह काप्ती सीच-विचार कर तय हुआ था। यहां बहुत ऊचे टर्जे के उदाक्षण वे जिन्होंने यह मास्ताबक्षण दी बनी है उसमें पेस्सि को बड़ी भूमिका है। फ्रांस में मेरे प्रवास ने मुझे बहुत कुछ दिया है और अगर मैं अमेरिका या लंदन में एक होता तो कहानी

कोड़ अतिविशेष क्षेत्रता है?

गोपाल दसरो न कोई' सभी पर लागु होता है। यह उसी प्रकार हो सकते हैं, जिस प्रकार भारत में स्योंकि किसी चीज के प्रति ऐसी भक्ति और स्मग्र उदाहरण है ईसा मसीह जो संपूर्ण विश्व में कसी भी मनुष्य, धार्मिक अथवा उत्साही गाति पर अभिव्यक्त करता है। मेक्सिको, उत्तरी अमेरिका और इंग्लैंड में मीराबाई के भक्त ठीक ख्वयं को केवल एक-दूसरे पर नहीं बरन मानक रकिनिष्ठ भाव महानतम जातियों का लक्षण है

व्यक्ति के लिए प्रेरणा का स्रोत है। आप की नोटबुक में ज्यादातर सामग्री गंथों से संकल्तित की गई है। इन पुस्तकों में टिप्पणियां भी मिलती हैं। इससे ऐसा धार्मिक व आध्यात्मिक लगेगा कि कम से कम आपके विवास अथवा चितन को चित्रकारों अथवा कला नी दनिया से उतनी अधिक प्रेरणा नही पदा-कदा चित्रकारों एवं कला-समीक्षक जितनी कि साहित्य, काव्य निया और दाशनिक, आध्यात्मिक शामिक विवासें से। दशन.

बहुत ही कम बातें हैं जिन्हें मैंने स्वयं अपने शब्दों में लिखा है। जैसे 'चित्र बनाए नहीं जाते 'देखी अपने कानों से, सुनो अपनी आंखों से।' आज यह बहुत ही सुंदर और अस्ट्रत मत बन गया है। समय-समय पर प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आंखें बंद करके सुनने और समझने का प्रयास करना चाहिए। मैं अजेय गजानन माधव जाता है। 'तम शून्य में तैरती है जगत्-समीक्षा'-जैसी पंक्तियां! जब सुंदर बातों को रोचक ढंग से वित्क बन जाते हैं।' मुझे सबसे अधिक प्रेत्णा कविता से मिली है। भारतीय कविता के अंतर्गत में तथा फ्रेंच कविता में ऐसी अब्दुत बातें कही गई हैं, जो इदय की गहराडयों से दृढ़ विशास के साथ जन्म लेती हैं तथा जिन्हें केवल शब्दों के माध्यम से ही व्यक्त किया जा सकता है। चित्रकार के लिए वे बातें कहना बहुत अज़ेय, गजानन माधव मुक्तिकाथ और मीर को पढ़कर अभिभूत हो महा जाता है तो मुझे अधिक आकर्षित करती है। कित है, जैसे कि उस्ताद, जिन्होंने कहा है-हिंदी तथा उर्दू

था कि अब में जहां तक हो सके, सफेद रंग युरेया के साथ मुंबई में एक प्रदर्शनी भी की थीं लेकिन आजकल स्ट्रांडयो में जो काम भारत में रहते हुए आपने एक बार कहा का प्रयोग करना चाहता है। आपने सीमा रंगों से सराबोर वापसी नकेद रंग की ओर आप कर रहे हैं

अपनी नोटबुक के संदर्भ में आप कह रहे थे

के पांच बिंदओं में उपस्थित था। पहला दुसरे का विकिरण है। इन सबके परिणामस्वरूप एक बडा चित्र प्राप्त होगा जो उन तत्त्वों का संयोजन होगा जिंदगी से प्यार करता है, में खुबसूरत चीजों से प्यार करता है और रंगों से प्यार करता है। मैं बार-बार रंगे की और लीट रहा है। अपनी बिंदु श्रृंखला की एक कृति के साथ सैयद हैदर रजा

कभी-कभी मुझे लगता है कि आप उन आज के चित्र से जन्म लेता है। चित्रों का आपसी संबंध ऐसा मजब्त और सगाठित है चित्रकारों में से एक हैं जिनका अगला चित्र मानो जब आप एक चित्र बना रहे हैं ठीक

हैं। अंतत: यह अपेक्षाकृत अधिक जिटल विस्तृत एवं स्थिर संयोजनों को अप्रीतत करेंगे। ये छोटे विचार हैं, ये उन बीजों के समान हैं जिन्हें बोया जिनका मैंने छोटे चित्रों में प्रयोग किया है और जो मेरे लिए प्रारंभिक रूप अथवा रेखा-कृतियां

आज भी संगीत में विद्यमान है। साथ हो चित्र मता में भी वे विद्यमान हो सकते हैं। उदाहरण

गनवीय भाष (संवेग) जिन्हें हम स्म कहते

वेयोग में दुख है। आप कैनवस पर प्रेमी एवं

पर कियोग है, दख का भाव भी है। यह चित्र सख स्दर्शित करता है। आकस्मिक मिलन में मुख है। मिका को शारीरिक रूप से नहीं देखते। पुझे माता है कि यह शायद कविता और मानव रीवन के अस्तित्व के प्रति मेरा प्रेम है। मुलभूत

और दख दोनों ही भावों को रंगों के माध्यम

के लिए-मुझे लगता है कि शुंगार पर चित्र बनान

आसान है। गजस्थान पर चित्र बनाना संभव आत्मा के सबसे विकस्सित रूप को चिडि

करना भी संभव है। मैं ज्यादा ब्याख्या

करना चाहता। मैं फोटोग्राफर नहीं हुं मैं पत्रिका का स्पोर्टर भी नहीं हु। मैं घली की सबसे खुबसुल स्त्री का चित्र बना रहा है। मैं नारी के



पत्नी अस्पताल जा खी होती है तो में अध्यात्म मझे काम करने में कठिनाई होगी। जीवन विभिन्न की और उन्मुख नहीं हो पाता। पेरे कार्य का यह पूरी तरह से कर सकूं: यह अभी-अभी शुरू हुआ है परंतु इसके लिए बहुत अधिक मानिसिक शांति स्थितियों और परिस्थितियों से बना है। जब मेरी भाग सबसे अधिक गंभीर है। में प्रार्थना और आशा करता हूं कि मैं अपने इस कार्य का निर्वाह

जा रहा है। आप उन्हें बढ़ते हुए देखते हैं और एक बार जब वह विकसित हो जाते हैं तो आप देखते और फूल भी आते हैं। बित्र भी इसी तरह सुगद्रित हैं कि उन पर केवल पतियां हो नहीं बल्कि फल

शब्दों का, इबारत का प्रयोग करते हैं। आप के पास एक अति अपने चित्र में वास्तविक



कि हम ऐसे प्रतिमानों पर पहुंच सकते हैं जो दनिया में कहीं भी सबसे ऊंचे हों। पर यह सिर्फ सोचने भर से नहीं हो सकता. आपको क्षमता के एक स्तर पर पहंचना होगा। फ्रांस में मेरे रहने ने मेरी मदद की. न सिर्फ यह देखने में कि निकोला द स्टाल, मोन्द्रियान या सुलाज के चित्रों में क्या श्रेष्ठ है बल्कि अपनी संभावनाएं विकसित करने, अपने तकनीकी कौशल का विकास करने और उस भाषा पर अधिकार करने में भी, जो मेरी चित्र-भाषा है। मैं अपना बचपन और जवानी नहीं भलता और ही उन सबकों को जो मैंने यहां पाए- रंग, रेखा, आकृति, स्पेस आदि की प्रारंभिक समस्याओं को लेकर फ्रांस एक ऐसा टेश है जिसमें अनपात का बोध असाधारण है: इमारतों में, कला में, साहित्य में और जिंदगी में। वह कला और चित्रकला में बहत महत्वपूर्ण है। अगर मैं इस सुयोग तक नहीं आता तो मैंने 'तमशून्य' या 'बिंदुनाद' जैसे चित्र न बनाए होते: विकीणं होते काले रंग में। मुझे काले के महत्त्व का अहसास हुआ। मैं उसे भारतीय चिंतन से जोड़ता हं। मझे लगता है कि काला रंग मातुरंग है वह रंगों की जननी है। वह विकिरण है और यह संभव है, मैं यहां चित्र बनाऊं या भारत में, इस बोध का उम फ्रांस में है जिसे मैं नहीं भूलता। अब आपने पछा कि मैं अगर भारत में होता

तो क्या यही काम कर रहा होता। सीधा जवाब यह है कि हां, मैं यही कर रहा होता। लेकिन मैंने सत्तर और अस्सी के दशकों में जो स्वायत्त किया था वह उस काम में प्रक्षेपित हो रहा है जो मैं अब कर रहा हूं। मैं किसी भी कीमत पर भारतीय होने की कोशिश नहीं कर रहा है। ऐसा नहीं है कि मैं पगडी पहन लूं या कि कुर्ता-पायजामा तो मैं भारतीय हो जाऊंगा। ऐसा भी नहीं कि मैं भारत के कुछ प्रतीकों और चिह्नों आदि का उपयोग करता हं तो मैं भारतीय कलाकार हो गया। न, ऐसा नहीं है। वह उसके मुलतत्त्व में है। अगर कोई कृति कुछ प्रतीकों , चिह्नों का बाहरी प्रदर्शन भर हो तो उसमें मूलतत्त्व नहीं हो सकता। हर कोई एक बिंद बना सकता है या त्रिभुज या वृत्त खींच सकता है। यह वही नहीं है। सवाल यह है कि नादबिंद स्पेस में ऐसे विकीर्ण हो सकता है जैसे भारतीय गायन या वाद्य संगीत होता है।

आप किसी भारतीय मंदिर में जो ध्वनियां सनते हैं क्या उसे किसी प्रोस्टेस्टैंट देवघर या चर्च में सून सकते हैं? यह कान्वेंट, जिसमें अब मैं रहता हं. १६४०-५० में बना था। मेरे घर के अंदर इतने सारे भारतीय विचार ध्वनियां. भावनाएं आदि रहते हैं कि इसका कोई महत्त्व नहीं रह जाता कि मैं फ्रांस में रहता और चित्र बनाता हं या कि दिल्ली या मुंबई में। सवाल दरअसल यह है कि उन सारे विचारों को आत्मसात कर जो हमारी परंपरा में आते हैं और जिन्हें व्यक्त करने के लिए उन कला-मुल्यों की व्यावसायिक समझ और चाक्षषता के अवबोध से मदद मिलती है, अपने कैनवस रंगों के संगीत से भर सके। मैं सोचता हं कि मैं मंडला में ही हं, मैं अमरकंटक या नीलकंठ चित्रित कर रहा हूं जी इन सबकों से आते हैं जिन्हें मैंने अपने बचपन से सीखा है और जिनके बारे में मेरी चेतना विकसित हुई है भले मैं उन सबसे भौतिक रूप से इतनी दूर रहा हूं। मूलतत्त्व तक जाना चाहता हं और यह देखना भी कि जिन साधनों का उपयोग किया जाता है उन पर पूरा अधिकार है। साधन जो सरल हैं, लक्ष्य जो सरल है- उनके

अगर मैं ठीक समझ पाया हं तो समाधान का आशय है किसी एक चीज पर एकाग्रता, बिना किसी हिचक के एकाग्रता, मन के यहां-वहां भटकने से बचकर। यह किसी भी व्यक्ति के लिए इतना आधनिक है। हम जिस समय को समझने की कोशिश कर रहे हैं उसे उदघाटित करने के लिए खाने की मेज पर यों ही होने वाली गपशप में भी यह प्रासंगिक है। यह महत्त्वपूर्ण है जब मैं अपने पंचतत्त्व के सामने हं और रंग और अवकाश के बारे में निर्णय कर रहा होऊं कि उसे काला होना चाहिए या लाल, पीला या उजला। में नामों के बारे में सोचने में डबा हं जो इन पंचतत्त्वों को घेरे रहेंगे। परी तरह से वहीं मौज़द रहना नितांत अनिवार्य है। यही समाधान है। मेरी नोटबक के पहले पृष्ठ पर एक दूसरा शब्द है-उपनिषद। मैंने इसे एक फ्रेंच अनुवाद से लिया है। कल्पना कीजिए। फ्रेंच अनुवाद में लिखा है कि इसके मायने हैं स्वामी/गरु के सामने संपूर्ण एकागृता और आजाकारिता के साथ बैठना। यह अद्धत है। इस्लाम क्या है ? इस्लाम ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण है। ये सभी विचार सुसंगत हैं न कि असंगत, ये वर्षों से इसी प्रकार से चले आ रहे हैं और मेरी समझ से अपरिवर्तनीय और अनश्रर हैं। हमें अपने देश की प्रचलित उक्तियों को आज महसस करने की आवश्यकता है: क्योंकि वे सत्य पर आधारित हैं। 'सत्य' और 'अहिंसा' पहले भी महत्त्वपर्ण थे. आज भी हैं और कल भी रहेंगे। मीराबार्ड का उदाहरण 'मेरे तो गिरधर



वित्र में कविता : रजा की एक और कृति

इस विषय पर मेरे विचार बिल्कल स्पष्ट है। संभवतः यह मेरी सीमा है और यही तथ्य है। मेरे विचार से यह बिल्कल सच है कि जीवन में तम्हें आध्यात्मिकता और सांसारिकता के बीच सामंजस्य बनाकर रखना चाहिए। तम बहुत ऊंचे उठ सकते हो लेकिन तम्हें धरती पर वापस आना होगा. कम से कम मझे तो बार-बार धरती पर आना ही है। अगर मझे सिर और पैर में दर्द है तो को आवश्यकता है। इसके लिए सांसारिक विषयों, समस्याओं और कठिनाइयों से मुक्ति की आवश्यकता है। मैं धीरे-धीरे अपनी शक्ति को फिर से जटाने का प्रयास कर रहा हं लेकिन साथ ही साथ मझे बहुत से अवरोधों का भी सामना करना पड़ा रहा है। ये आने वाले बड़े चित्रों के लिए प्रारंभिक नोटस हैं। अगर मैं कह कि यह मेरी सीमा है तो ऐसा इसलिए है कि मैं

उसी समय रहस्यात्मक ढंग से अगले चित्र की भूमिका रच रहे हैं।

बिल्कल सही। यह बिल्कल ठीक बात है। यह इन तीन-चार चित्रों से बिल्कुल स्पष्ट है जो इस समय स्ट्रियो में रखे हैं। मैंने आपको एक पराने चित्र का फोटो दिखाया था. जो कि आज दीवार पर लगे राजस्थान को प्रतिबिंबित करने वाले चित्र का प्रेरणा-स्रोत है। दो बिंद ' पंचतत्त्व

चित्र है जिसमें आपने एक कविता की पंक्ति अंकित कर दी है। अभी आपने 'सर्य नमस्कार' नामक चित्र में हिंदी शब्द 'सूर्य नमस्कार' का प्रयोग एक भाग के रूप में किया है।

केवल यही नहीं, कभी-कभी में कुछ छंद भी अंकित कर देता हं, जैसे- 'मेरा मझमें कछ नहीं' अथवा 'मां लौटकर जब आऊंगा क्या लाऊंगा?' या 'तुमसे मिलकर उदास रहता हं।' यह रीति विशेष कभी-कभी दर्शकों को इस प्रकार से धामित कर सकती है कि वह चित्रों को समझने के बजाय उन्हें पढ़ने का प्रयास करने लगें। हर व्यक्ति उसे बार-बार पढ़ने की कोशिश करेगा। एक ऐसे व्यक्ति के लिए जो वह भाषा न जानता हो समझने में कठिनाई भी होगी।

मेरी समझ में जो शब्द मैं चित्रों में प्रयोग करता हं अथवा उन पर लिखता हं, उनकी रचना बहुत सावधानीपूर्वक की जाती है तथा उन्हें चित्रों में व्यवस्थित ढंग से समाहित किया जाता है। यह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है लेकिन मुल रूप से यह पथक विचार है। मैंने महसस किया है कि लयात्मक संक्षिप्तीकरण के क्षेत्र में कई सालों के प्रयोग के पश्चात मैंने जो चित्र बनाए वे रंगों में विषयवस्त से परे अभिवयक्तियां थीं। जब मैं अपने चित्र में फैज के शेर देवनागरी लिपि में अंकित करता हं तो यह एक प्रेमी का अपनी प्रेमिका से मिलने का सुख है और क्योंकि यहां

स्त्रियां सांवली होने के बावजूद बहुत खुवसूरत हैं, अपनी संदर आंखों, संदर लेलाट एवं नारीत्व के कारण। वह जानती हैं कि कितना बताया जाए और कितना छुपाया जाए। उनमें लज्जा जैसा विशेष गुण निहित है जो कि अत्यंत मल्यवान है। जहां तक मेरा सवाल है मैं पेरिस में खता है और जानता हं कि यहां पर अखबार देह का ग्रेसा प्रदर्शन करते हैं कि आपमें इन अखबारों के प्रति ऊब पैदा हो जाती है। जीवन तथा नियांकित भावों की लय में अनिवार्य रूप से नारीत्व हो सकता है। मुझे लगता है कि राजस्थान को, बिना नाधद्वारा मंदिर अथवा रंग बिरंगी पोशाकों में सड़कों पर घुमते हुए स्त्री एवं पुरुषों तथा छत पर बैठे हुए मोर को चित्रित कर, प्रदर्शित किया जा सकता है। रेखाओं, रंग एवं अवकाश से इसका संकेत किया जा सकता है। आप देवताओं या ईश्वर के चित्र नहीं बनाते बल्कि अलीकिक आलोक और आनंद को चित्रित करते हैं: साधारण और ईश्वरीय। मैं चाहता है कि मैं सफेद रंग में कछ चित्रित करूं. जिसमें हीरे जैसी चमक, चंद्रमा की पवित्रता हो, जो कि प्रकृति में एक रसिक के जीवन के प्रति प्रेम को प्रदर्शित करे, और इस सीमा तक चला जाए कि उसकी आखिरी सबसे बडी अभिलाषा अनिवार्य रूप मे आध्यात्मिक हो, जो कि मेरी दृष्टि में सबसे बडी मानवीय महत्त्वाकांक्षा हो सकती है।

अस्तित्व को प्रतिबिधित कर रहा है। हमारी

एक प्रश्न आपके काम से जड़ा है। अधिकतर रचनाकार, चाहे चित्रकला के या मृतिकला के, साहित्य या संगीत के क्षेत्र के, उस आलोचनात्मक प्रतिक्रिया से असंतृष्ट रहते हैं जो उन्हें मिलती है। इस बात से नाखश कि उन्हें ठीक से समझा नहीं गया। अपने कार्य को लेकर आलोचकों की प्रतिक्रिया के प्रति आपका

क्या रुख है? किए जाने पर खुश हो। मैं जानता हूं कि मेरे ऐसे कवि-मित्र हैं जो अपनी कृतियों से नितांत

ईमानदारी से देखें तो आलोचना खना के बाद आती है। इसका स्थान कलाकृति और कलाकार के पहले नहीं है। कलाकार के रूप में फ्रांस और भारत के अपने अनुभव में मुझे अच्छी और बरी- दोनों तरह की समीक्षाएं मिली हैं। मैंने कभी कला समालोचकों के पीछे भागने की कोशिश नहीं की. उनसे मदद की अपेक्षा नहीं की। आलोचकों से प्राय: मेरे अच्छे संबंध रहे. उनमें से कुछ मेरे बहत गहरे मित्र हैं और यदा-कदा फ्रांस और भारत में मेरी प्रतिकल आलोचना भी का गई है जो स्वाभाविक है। राइनर मारिया रिल्के का कहना था-'कला आलोचना से बरी और कोई चीज नहीं।' मैं उतनी दर तो नहीं जाऊंगा। मेरी समझ में मीडिया या आलोचक कला-परिदृश्य को समझने, उसे उभारने के लिहाज से जवाबदेह हैं और वे अच्छे. बरे या बिल्कल ही अप्रासंगिक हो सकते हैं। मझे पका यकीन है कि प्रामाणिक कार्य जरूर ध्यान खींचता है। इसमें कुछ वक्त लग सकता है लेकिन मीडिया किसी एक विशेष समय में प्रामाणिक कार्य पर जरूर ध्यान देता है। क्या हमें इसकी फिक्र करनी चाहिए? हां भी और नहीं भी। लेखक और कलाकार भी एक इंसान है और प्रशंसा से उसे खुशी ही होती है। यह कुछ वैसा है जैसे एक स्त्री सुंदर समझे जाने और तारीफ

र ज़ा रखते ही नहीं हैं, दूसरों का रखा बहुत गौर से देखते-परखते हैं-खासकर लिखा हुआ। पहते-पहते अपनी नोटबक- 'ढाई आखर'- में वे कविताएं और उद्धरण भी उतारते जाते हैं। पेश है उनकी नोटबक की झलक:

मैं नीर भरी दख की बदली परिचय इतना इतिहास यही कल उमडी थी मिट आज चली। -महादेवी वर्मा

ओझल होती-सी मुड़ भर कर

कह गई तुम्हारी छाया

मझको ही सोच-भरे यो हीं खडे-खडे जो मुझमें उमड़ा वह कहना नहीं आया।

जो है उससे बेहतर चाहिए दनिया को बदलने के लिए मेहतर चाहिए

शुरू हुआ दिन कोलाहल के पहले देश देशांतर की

अनदेखी छापहीन खलती हुई राहों पर हस्ताक्षर कर देता हं

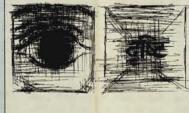
-केदारनाथ सिंह

न शक्लं न कृष्णं। न रक्तं न पीतं न कब्जं न पीनं। न हस्वं न दीर्घ। अरूपं तथा ज्योतिराकारतत्त्वा तदेको विशिष्टं शिवः केवलमहम

बनते रहे बिगडते रहे कारबारे शौक एक हम हैं आरज का सहारा बने -मकदम

बस अब उनसे युं कहते चले कि लौट के न आएंगे कभी दिल में ये भी समझते हैं कि फिर लौट के आना है।

पशेमां दिल जरा दम ले तमाशा देख लूं मैं भी जलाकर आशियां मेरा किसी को क्या मिला होगा।



बलाकर्म एक बिरिव उन्माद है। इसे विश्वास से सहनवा है सम्पूर्णता है पढ़ाईगं है शोर्च है सांश्रम में न प्रतिभा में , अपूजे ही । जो बुढ़ सामने हे प्रत्यक्ष है पा देक्त आर्त नहीं देख गतीं। इस हो अर्तिक्य तद, अनेद अर्यार्थित सम्भवनाएँ हैं गृष्ट एक दिया है। निस्मिदेह बुद्धि तर्षे और व्यवस्थित उन्हार के शिक्षा पा वसी दिवाशीर -'भन्ताओं ते' से धसावन का सर्वश्रप्त साथन है।

रका की नोटबुक से एक पृष्ठ, रजा के सौजन्य से

वस्धा वाक् शरण

उसके होने में हम हुए शामिल होने लगे

-गिरधर राठी

शेर मेरे हैं गो ख्वासपसंद गुफ्तगू पर मुझे अवाम से है।

पागल नंगा है या पहने इसको लोग देखकर जानें।

-विनोबाः गीता प्रवचन

लौटकर जब आऊंगा क्या लाऊंगा यात्रा के बाद की धकान।

-अशोक वाजपेयी

तुम तुंग हिमालय श्रृंग और मैं चंचल गति सुर सरिता

एक दिन बच्चों की बेखौफ हंसी होगी बच्चों की बेखौफ हंसी की तरह। ऐसी कोई चप्पी नहीं जो खत्म न हो। जैसे पत्थर के नीचे दबी घास जैसे राख में जिंदा आग

-पंकज सिंह

हुई मुद्दत कि गालिब मर गया पर याद आता

वो हर इक बात पर कहना कि युं होता तो क्या

कछ नहीं तो कम से कम ख्वाबे शहर देखा तो

जिस तरफ देखा न था अब उस तरफ देखा तो

-मजाज

पाया भी उनको, खो भी दिया, चुप भी हो गए एक मुख्तसर-सी रात में सदियां गुजर गई।

कतअ: कीजै न ताल्लक हमसे कुछ नहीं तो अदावत ही सही।

-गालिब

बाकी पेज २ पर

शरद रंजन शरद

कविताएं

### सहेजना

बेतरतीब बढ़े जीवन में कुछ भी तो छांट डालेंगे उसे पौधे की तरह और ध्यान रखेंगे यह भी कि वह अलग तो नहीं हो रहा जड़ से

फालत चीजों का अंबार लगे घर में तो कर देंगे कडेदान या कबाडी के हवाले पर मनाएंगे उनमें से भी सहेज लें कुछ चुनने वाले

कपड़े फटेंगे देह के तो भी चलेगी नए सिरे से केंची बनेगा झोला, पोंछना, गेंदडा दम तोड़ते रेशों के साथ आएगा कुछ नया

जीमेंगे मन भर पहले रखकर आगत के लिए गुड-पानी चिडियों के लिए दाने और बीज मिट्टी में

फलेगा-फुलेगा घर मगर यह भी सोचेंगे हर पल अपने लिए कम से कम काटना पड़े जंगल सर ढंकने के लिए छत हो और खले रहें दरवाजे तलवों को छील रही कंकरीट के बची रहे कुछ नर्म-मुलायम घास

जोतेंगे धरती उंगलियों के हल से कि आहत नहीं हों जीवित कोशिकाएं बहाएंगे मगर रखेंगे आंखों में पानी सांसों में हवा हथेलियों में ऊष्मा बचाएंगे जागे हुए सपनों के सच

हमारा होना और करना इस बात से है कि हम खर्च करते वक्त सहेज लेते हैं क्या-क्या जर्जर से भी जोड़ लेते हैं कितना कुछ फेकते हैं तो इस भरोसे कि उसकी थूल लौटकर आएगी घर और बहुत झाडने-पोंछने के बावजद छिपी रहेगी जीवन के अंतरों में

इस ब्रह्मांड का लघुतम कण है मेरा हिस्सा इसे ही सहेजना बरतना और बचा लेना कज होती जहां-जहां धरती चींटी की तरह इस शक्कर को दूसरी ओर रखना और उसके भार भर मीठी याद छोड़ जाना।

सही-गलत के धूल भरे निशान घंधली लिखावटों वाली अनमेल चिद्रियां पुरानी यात्राओं के समान

मझसे अब तक जुड़े अपनों के अक्षय कोष देखती-कहती है मानुषी जाने कितनों से रहा तुम्हारा प्रेम किस-किस से जड़ी है यह जान !

### स्त्री-धन

मालूम है उसे ठीक-ठीक जीवन के लिए जरूरी कितना ठोस कितना तरल कितनी मिठास कितना नमक

चाहिए कितनी ठंढक किस हद तक गर्माहट

आंखों तक आता कितना आकाश सांसों तक जाती कितनी हवा

मालूम है उसे सबक्छ सही थूप से लौटे हुए को कितनी देर बाद चाहिए पानी देर से सोन्हाए पेट को कौन से दाने जानती है वह अच्छी तरह इसलिए घर में कुछ न होने पर भी दंख लेती है पात्र उसमें सटा थोड़ा सा सत कहीं बचा हुआ अमृत

संभव है किसी दिन छीज जाए धरती पानी और लवण दिखाई न दे कोई किरन रुक जाए हवा रीत जाए आकाश

फिर भी वह जुगा लेती भरोसे के कुछ दाने मेहनत का नन प्यार की बूंद

बेहद गाढ़े दिनों में भी हारने नहीं देता यह विश्वास कि जब सब हो जाएगा शेष काम आएगा स्त्री का संचित कोष

### असमय नहीं

समय है जहां पहियों पर दौड़ने और पंखों के साथ उड़ने का अपने और अपनों के पीछे छोड़ते कामयाबी की बुलंदियां छूने का वहां जाता नहीं में कहीं खुद से भी बाहर अप्रिंगानिस्तान की मौजूदा हालत को देखकर पारसी की कवयित्री फरोग फर्रखजाद का ख्याल आता है। उसकी

लंबी कविता की पंक्तियां बड़े अर्थपूर्ण ढंग से दिमाग में चक्कर लगाती मुझे उन मोहल्लों सड़कों और घरों में ले जाती है जहां से मैं गुजरी हं लगता है। हर शै यही पंक्तियां गुनगुना रही है: कोई भी नहीं चाहता यकीन करना कि बाग सख रहा है कि/ बाग का दिल धूप में/ झलस रहा है/ कि बाग का दिमाग धीर-धीरे/ हरियाली की यादों से खाली हो रहा है/ और बाग का अहसास/तन्हा चीज है, जो दम तोड रहा है।

जिस बेदर्दी से अमेरिका के बमों ने गिर कर अफगानिस्तान का भोगौलिक नक्शा बदला है. उसने उस ज्यादा गहरे तरीके से औरतों के दिलों में शिगाफ किया है। उनकी गोदें वीरान और घर वर्बाद हो गए। किसी घर में मर्द के नाम पर बच्चा तक नहीं बचा। आखिर पच्चीस वर्ष से चली आ रही यह लड़ाई जहां मदों को निगल रही है वहीं औरतों को भटकने पर मजबूर कर रही है। इसका सबसे दर्दनाक नमूना नब्बे साल की कवयित्री 'समनब्' हैं जो आज हेरात की सड़कों पर अपना पहला गजल संग्रह हाथ में पकडे भीख मांगती नजर आती हैं। उनकी इस हालत के पीछे सच्चाइयां हो सकती हैं. पहली यह कि वह हालात की मार से सनक गई हों और गहरे मानसिकं संताप के कारण उनका संतुलन बिगड़ गया हो और दूसरा कारण यह हो सकता है कि उनका घर-बार गृहयुद्ध के कारण उजड गया हो। लाल फौजों के आने से लेकर आज अमेरिकी बमबारी तक गांव के गांव जल कर राख में बदल गए हैं। पिछले बीस वर्षों में कभी कोई हादसा 'समनब्' को बेसहारा कर गया है। उनकी कविता की चंद पंक्तियां देखें:- क्या करूं ऐसा जो/ गुजर जाए आज का दिन/ अपनों के हाल पर रोई मैं आज/ नहीं है मेरे पास खाना, पैसा,

काम/अपना ही गम बला बन गया है आज। समनव की तरह लीदा उम्मीद जीवट नहीं थी। उसने सिर्फ बीस वर्ष खुन में इबे अफगानिस्तान को देखा था। शायद उसकी पैदाइश के समय पठानों की रस्मों के मृताबिक बंदक नहीं दागी गई होगी, मगर गृहयुद्ध के चलते मशीनगन, मिसाइल और तोपों से हेरात गुंज रहा होगा। यह संवेदनशील कवयित्री १९९९ में अपने ऊपर तेल छिड़क कर मर गई। वह अपनी कविता की नोटबुक में बार-बार यह लिखती थी कि मुझे अपना वतन प्यारा है। अपने पूरे वजुद

के साथ। हम उन औरतों की बातें कर लेते हैं जो अपनी भावनाओं को कलम द्वारा कागज पर उतारना जानती हैं, मगर हजार औरतों कि जो अपना होंठ सिले अफगानिस्तान में नई बनती कब्रों के सिरहाने न से सकती हैं न बयान कर सकती हैं, व्यथा-कथा कौन पढ़ेगा, सनेगा, लिखेगा? ऐसी औरतों को लक्ष्य कर १९७६ में मीना नामक महिला ने प्रगतिशील विचार रखने वाली अन्य

उदासीन हैं लेकिन जब कभी मैं उनकी

### ये लड़िकयां हरगिज खामोश न हों

महिलाओं के साथ एक सियासी महिला संस्था 'रावा' शरू की, मगर इससे पहले कि 'रावा' अपना काम शुरू करती लाल फौजें अफगानिस्तान में दाखिल हो गई। सोवियत समर्थक साम्यवादी पार्टी परचम और खल्क का जमकर इस संस्था ने विरोध किया, जिसके कारण 'वजीहे' और 'नाहीद' को अपनी जान खोनी पड़ी और बाकी सदस्यों को जहर दे दिया गया। 'रावा' का मकसद औरत के अधिकारों के प्रति न केवल औरत को जागरूक करना था बल्कि उनको अधिकार दिलाने थे। अपने को प्रगतिशील कहलाने वाले परचमी व खल्की भी महिलाओं के मामले में रूढीवादी सोच के

साबित हुए। मुजाहिदीन समुदाय जो पाकिस्तान में शरणार्थी जीवन व्यतीत कर रहे थे उन्हें 'रावा' के तौर-तरीके बिल्कल पसंद नहीं आए और खाद एवं गुलब्दीन समुदाय ने 'रावा' की बनियाद रखने वाली 'मीना' का काम तमाम कर दिया। यह बहुत बड़ी क्षति थी मगर संस्था खत्म नहीं हुई और तालिबानों के समय में भी वह अपना काम करती रही। यह अलग बात है कि उनको काबुल छोड़ कर पाकिस्तान में पनाह लेने पर मजबर

'रावा' सारी कठिनाइयों के बावजद कई भाषाओं में अपना पर्चा छापती है ताकि अफगानिस्तान में होते सियासी बदलाव और उससे प्रभावित औरतों की स्थिति साफ हो, जैसे बलात्कार अफगानिस्तान का एक ऐसा अपराध है जो लगातार शहरों-कस्बों में कमसिन औरतों के साथ होता चला जा रहा था जिसकी दर तालिबान सरकार में बढ़ने नहीं पार्ड मगर जेलखाने अलबता औरतों से भर गए। औरतों पर पाबंदी थी कि वह बीमार होने पर डॉक्टर या खरीदारी के लिए घर से बाहर न निकले। पुल-ए-चर्खी नामक जेल में औरतों के लिए

पचास की संख्या तक की गंजाइश थी। वहां पर २००० औरतों भरी थीं, जिनका जुर्म बहुत मामूली था। रेडक्रास की तरफ से जो खाद्य पदार्थ मिलता था, उसको कर्मचारी बेच देते थे और बहुत कम मात्रा में चावल उबालने को देते थे, जो एक कैदी की खराक से बहुत कम होता। औरतें भूख, बीमारी, निराशा तनाव से पीड़ित रहतीं। बलात्कार के बाद जो सबसे बडी समस्या औरतों को लेकर वज़द में आई है वह अपहरण की है। धर्म के नाम पर हर तरह के गुंडे बदमाश

की पूर्व-नियोजित

होती है जो किसी विशेष

विषयवस्तु से संबद्ध

होती है। उदाहरण के

अफगानिस्तान

नासिरा शर्मा

खुलेआम लूटमार के लिए भटकते रहते हैं। उसका कारण बेकारो, भूख, कुंठा और महंगाई है। ऐसी हालत में औरतों पर दोहरी मार है। एक तरफ पढने-लिखने, बाहर घमने-फिरने पर पाबंदी है और दसरी तरफ सड़क या गली में अकेला निकलना सुरक्षित बिल्कुल नहीं है।

अफगानिस्तान में कई विवाहों का चलन

मिलनसार उनकी पत्नी से बातचीत के टरम्यां कर बातों का पता चला। एक औसत अफगानी औरत अपनी मर्जी से कहीं भी आ जा नहीं सकती है। यदि वह पढ़ी लिखी है और नौकरी करना चाहती है और अपने मौलिक विचारों को सामने रखना चाहती है तो पति बहुत शालीन स्वर में पांतु फैसलाकुन आवाज में कहेगा कि खानम! ऐसी हालत में मेरे घर में तुम्हारी कोई जगह नहीं है। मर्द की मर्जी से जीना ही अफगान सभ्य समाज की परंपरा है और इस रिवायत को अस्वीकार करने का अर्थ है सौत को सहन करना या फिर तलाक की लानत को झेलना।

सबसे ज्यादा अत्याचार औरतों ने उस समय

झेला जब तालिबानों और उत्तर के अहमद शाह मसद में उन गई। तालिबान के हमलों और उत्तरी भाग में लडाई के कारण अक्सर बेसहारा औरतें अपने जले घर-बार और मरे मदौँ को पीछे छोड़ काबुल की तरफ पनाह लेने के लिए भागतीं तो उनके पास कभी टोकरा भर अंगूर होता या देगची या फिर बुखारी। बहुत कम औरतें ऐसी थीं जो अपने चौपायों को अपने साथ ले आ पाउँ, जिनको बेच कर उन्होंने अपनी जिंदगी को तस्तीब दिया. वरना अक्सर चौपाए औरतों से संभल न पाने के कारण रास्ते में भाग जाते। जवान गर्भवती औरतों को ऐसी हालत में जब दर्द शुरू होता तो किसी तरह पत्तियों की आड़ बना उनको बच्चे के जन्म में मदद करनी पड़ती। कुछ अमीर घर के बच्चों का अपहरण कर फिरौती मांगी जाती या फिर ताजिक होने के कारण उन औरतों को जेल में डाल दिया जाता और खाने-पीने की सविधा न होती। रास्ते में छापामार अपहरणकर्ता, बलात्कारी, चोर-उच्चके, हर तरह के लोग इन बेसहारां औरतों को परेशान करने के लिए मौजूद रहते। जो औरतें मर्दों के साथ

होतीं, उनके मर्दों को कैदखाने में डाल देते। जब औरतें जेल जाकर पता लगाना चाहतों तो जवाब

मिलता 'मुझे मालुम नहीं। अफगानिस्तान एक बदनसीब मुल्क है उससे ज्यादा बदनसीब वहां की औरतें हैं जो किसी भी सरकार में चैन से नहीं रह पाई और न कोई व्यवस्था उनके विकास और उत्थान के लिए कुछ कर सकीं। इसके बावजूद वे जीने के लिए हर कठिन डगर से गुजरने के लिए बाध्य हैं। चाहने न चाहने के बावजूद वह आतंकवादियों,

छापामारों, कठमुल्लाओं, रूढ़िवादियों की मां, . . बहन, बेटी कहलाने के लिए मजबूर हैं। बमबारी ' में भागती बढ़ी औरतों का रोना और पीड़ा का वह कसैलापन कि अपनों को दफनाए बिना वह लाशें खुले आसमान के नीचे छोड़ भाग आई हैं। अफगानिस्तान का इतिहास साक्षी है कि

किसी दौरे में चाहे वह बाएं बाजू वाली सरकार या दाहिने बाज वाली सरकार हो, किसी ने भी औरत से नहीं पूछा कि तुम कौन सी व्यवस्था देश के लिए चाहती हो। आज भी नई सरकार बनाते हुए विश्व के विकसित देश किसी भी अफगान स्त्री की भागीदारी की जरूरत महसूस नहीं कर रहे हैं जबकि विश्व प्रेस ने महिला दमन की सबसे लोमहर्षक कहानियां अफगानिस्तान के संदर्भ में छापों और दिखाई थीं। परंतु जब वास्तव में कानून बनने का समय आता है या हिस्सा मिलने का अवसर होता है, उस समय औरत नेपध्य में चली जाती है। तब वह अपना मुकद्दर पुरुष में, राष्ट्र में, परिवार में देखने पर . . . मजबर कर दी जाती है।

आज से नहीं पिछली कई दहाईयों से अफगान बच्चियां बेची जा रही हैं. घरों में काम करने वाली नौकरानियों के रूप में। उनके मां-बाप की दोहरी मानसिकता है। पहली कुछ धन की प्राप्ति दूसरे बच्चों का लालन-पालन न कर सकने का दबाव। सो वह इसी में अपनी मुक्ति देखते हैं कि चलो बेटियां कहीं पेट तो भर रही हैं। जवान लडिकयां वेश्यावृत्ति में फंस चुकी हैं, पेट की आग बुझाने परिवारवालों का खर्च उठाने के लिए। इसके अलावा उनके पास कोई विकल्प नहीं है। अब तो ११ सितंबर को पेंटागन के आक्रमण के बाद अफगानों को काम मिलना भी कठिन होता जा रहा है विशेषकर औरतों को, जो अधेड उम्र में घरों में केक बनाने, सिलाई और सफाई का काम करके या चटनी, अचार, मुख्बा बना कर अपना गुजारा कर लेती थीं। बहुत कम ऐसी खुशनसीब लडिकयां हैं जो विदेशियों से विवाह करके एक सम्मानित जीवन व्यतीत कर रही हैं। प्रचार एवं प्रसार माध्यम से जो छवि औरत की यह कह कर दिखाई जा रही है कि ब्युटीपार्लर खुल गए हैं। औरतें लडिकयां दाखिले ले रही हैं। नौकरी करने निकल रही हैं। यह एक ऐसा महिला विरोधी सियासी हथकंडा है जो वास्तविकता से कोसों दर हैं। इस सच पर तो कहने का दिल चाहता है कि 'पास में नहीं दाने अम्मा चली भुनाने । औरतों को स्यापा करने से फुर्सत मिले तो वह क्रीम मलें। उनका मुंह तो रोज कई-कई बार आंस्ओं से घुलता है। अफगान औरत सारे दबाव के बावजूद हालात से जुझ रही है। शामल के शब्दों में मैं कहना

धान के जले खेत के किनारेय/शांत खडी बाला/ हवा में हिलते उसके महीन कपड़े । खुदाया, खुदाया । ये लड़िकयां, हरगिज खामोश न हों/ जब उनके मर्द। थकन और निराशा से, बढ़े हो

तिये -ए-बालाः काबुल का कब्रिस्तान

जाहिर शाह के समय में था। बाद में इस पर पाबंदी भी लगाई गई मगर जो मानी नहीं गई। विवाहित औरत पूरी तरह पति की मर्जी के हिसाब से चलती है। पहले भी कबीलों में मर्द का काम गप्पे मारना, चाय पीना और औरत की जिम्मेदारी खानादारी और खाली समय में कालीन बनना है। जिसको बेचने का और इससे मिले रुपयों को रखने का अधिकार मर्द को है। कुछ वर्षों पहले एक माओवादी प्रकाशक व कवि १९७६ में भागकर भारत आए थे। बहुत हंसमुख और

बिंदु का नाद

मैं १.५० मीटर गुना १.५० मीटर के एक बड़े अंदर से आते संदेश को पकड़ना बहुत जरूरी है। हाथ में लेने को उद्यत थे और इस अपार उत्साह

जवानी और ऊर्जा से भरे हुए थे। हम

हुआ था। वह उस

वक्त हुआ जब हम

रस्त कट्टर प्रवृत्तियां किसी न किसी किस्म की धार्मिक संवेदना से उत्पन्न हुई हैं। इसलिए संदेह का एक आधार तो है ही। ऐसे माहौल में आप हिंदू धर्म, बौद्ध मत, इस्लाम के प्रति समान महत्व की वकालत कर रहे हैं। इस प्रमुखतः धर्मीनरपेक्ष मार्ना बत्र में आप खद को कहां पाते हैं? मेरी दृष्टि में सार्य धार्मिक विश्वास मूलतः निजी

कुछ कविताओं की, जो मुझे याद हैं, आवृत्ति करता हं तो उनके चेहरे पर चमक देखता हूं। मेरे विचार से यह अत्यंत मानवीय और स्वाभाविक बात है: रचना प्रक्रिया में दूसरे की प्रतिक्रिया का कोई भी महत्व नहीं। में इस तरह सोचना शुरू नहीं कर सकता कि कौन

कैनवस पर एक चित्र बनाना चाहता था और यह अकेले रहना बहुत कठिन है। मेरे हिंसाब से वह और आनंद के बीच यह ट्रैजिक घटना हुई। में

बरसों पराने पड़े पन्ने दाग रह गए हैं उंगलियों और नमी के कछ स्याहियों के छीटे

रही के भाव बेच नहीं इन्हें रखा है तह पर तह कर

लिबास जो होते गए छोटे जगह-जगह मसकने और दरकने के बावजूद नई चीजों से बदले नहीं

देखा है इन्हीं से अपने जीवन का अक्स छटते समय के बरअक्स

ईट कंकरीट से बने घर में बचाए रखी है मिड्री की परत सरक्षित है जहां कई पीढियों की छअन

पहली भोर से जल रहे सूरज और चुल्हे की आंच पर पक और पग रहा अपना मन पहली ही सांझ से लगाए रखा है आंखों में अंजन

कद कारते बडप्पन में ज्गाया है स्मृतियों का बालपन पथराए शरीर की खोह में सिहरती आत्मा मचलता मन

दिलो-दिमाग के दराजों में हैं लाल-काली तारीखों वाली डायरियों



लगाता चक्क झेलता लगातार जीवन के दिन-रात

सेहत मेरी बरी न वय बहुत अधिक सामध्यं इतना जरूर कि मेले में कछ देर टिक सकं ऐसा भी नहीं कि इस व्यवस्था से हं अनधिज जानता हुं कि सफर में किसी तरह चलते रहना युद्ध और प्रेम में सबकुछ करना जायज है मगर मैं शब्दों की दनिया में इतना खोया कि कई बार अपना नाम भी याद नहीं रहा।

ऐसा नहीं कि बहुत छोटा है यह संसार जीवाश्म की तरह इसकी एक-एक ईंट का है इतिहास हर स्मृति का है वर्तमान और भविष्य इसकी धड़कनों से फटता है काठ्य हालांकि मेरे पास पर्न नहीं इतने कि लिख सक् सब चौकस नहीं उतना कि सन सके भीड़ की और शून्य में लगातार गूंज रहा नि:शब्द

मगर रेशा-रेशा रचता हं जो कछ असल में वही होती है कला सत भर सांस और बंद भर आस पर रहने की वही है जिजीविषा वही साधना आदमी और आदमियत को समझने की

वे हैं स्तब्य और क्षब्य कि मौन पड़ा क्या कर रहा इस मखर जीवन का क्यों नहीं समझ पा रहा कि दीमकों से भरे संसार में पन्नों पर उतनी इबारत का क्य भविष्य और इस मन का भी क्या भरोसा कि आप उसमें कुछ रखें और घन न लगे दिल की बात कहते हुए दिमाग न फिरे

वे समझते हैं मुझे हठी और खतरनाक परेशान हैं कि जब आदमियत चली गई क्यों बार-बार आता है भुख और सच का नाम जब मौसम हो मौज-मस्ती और धम-धडाके का वे धमाके से मेरा काम कर देना चाहते हैं तमाम चरा लेना चाहते हैं आत्मा का चिराग

सबसे जरूरी समय है सोचने का जब कुछ समझ न आए विचार करने और रखने का जब सब खाली होता जाए सबसे जरूरी समय है पढ़ने का जब कुछ पहा न जाए गढ़ने का नया जब होंठों से कुछ कहा न जाए सबसे जरूरी समय है यह कि असमय न हो जाए

किसे नहीं। हमें क्रिया में पूरी तरह संलग्न रहना चाहिए, परी एकाग्रता के साथ और रचना में डबा होना चाहिए। एकमात्र जिस चीज के लिए मैं प्रार्थना करता हं

अनेकानेक त्रिभज थे।

ज्यामिति स्थिर होती है पर एक रंग का दूसरे

से संबंध वस्तुत: सामांजस्य का प्रश्न है। रंग

एक-दूसरे के प्रति अनुराग रख सकते हैं और

उदासीन भी हो सकते हैं। वे एक दूसरे के प्रति

शत्रतापूर्ण भी हो सकते हैं। रंग असंख्य मानवीय

भावनाओं को प्रकाशित कर सकते हैं जिनकी

हमारे भीतर क्षमता है और मैं कोशिश कर रहा हं

कि उन्हें पर जीवंत किया जा सके। यह एक

नितांत नया अनुभव लोक खोलता है। इस चित्र

के द्वारा, मैंने सोचा, सरलतम साधनों से मैं उस

मूलभूत है। जीवन में, गर्भावस्था में, जन्म और

मरेण में ध्रुवांतता। भारतीय विचारों के आधार पर

और उनकी सहायता से इस प्रकार की एक वस्त

परिकल्पित की जा सकती है। मैं उदाहरण के

लिए एक दूसरा चित्र लेता हं जिससे रंग-समन्वय

की बात साफ हो सके। एक बिंद जो श्याम है

और धसर में विकीर्ण होता है: यह एक विशिष्ट

रंग-स्थिति है जो प्रकाश के श्यामवर्ण से संबंध

की पन: याद दिलाती है। यह अदभत वास्तविक

यथार्थ बिंदनाद है। एक और उदाहरण। एक बीज

के रूप में बिंद, एक अनिवार्य ज्यामितीय

आकति- यह विचार मेरे दिमाग में गड़ा हुआ है।

बीज ऊर्जा विकीरित करती है और वह ऊर्जा रंगों

में प्रकट होती है जो उजले, पीले, नीले और लाल

हैं। अब यह रहा एक बिंद पांच रंगों से यक्त।

काला संकेंद्रित वृत्तों में विकीर्ण है, धूसर उजले

की ओर जा रहा है, नारंगी पीले की ओर, गहरा

लाल अरगजी लाल मिलता सा और गहरा नीला

आसमानी की ओर जाता हुआ। एक मलभत

चित्रात्मक यथार्थ। मैं और आगे जाऊंगा। मैं इसी

पंचतत्त्व बिंदु को के केंद्र में रख दूंगा। और

उसके गिर्द अपना उपवन, अपना संसार, केंद्रीय

बिंद से पांच रंगों में उभरता हुआ। यह मेरा उपवन

है, यही मेरी दृष्टि है। मुझे नहीं पता कि भारत के

किस संग्रह में यह कलाकृति है, पर यह मेरे

सर्वश्रेष्ठों में से है। फिर भी योजनाएं हैं जो उसी

जलबिंद से निकली हैं: दुर्भाग्यवश वह चित्र

कान से पेरिस आते हुए एक ट्रक से चोरी हो

गया। मेरे पास राजस्थान के चित्र हैं जो रंग का

आहलाद प्रकट करते हैं। यहां पन: चित्रात्मक

तर्क महत्त्वपूर्ण होगा। निरपवाद रूप से.

चित्रात्मक स्थितियां भिन्न-भिन्न होती हैं। आपको

आश रचना करना होती हैं, कार्य के दौरान निर्णय

लेने होते हैं, जो, मैं कहंगा, बद्धि पर नहीं, काम

के समय रंग की सीधी समझ पर निर्भर होते हैं।

मझे याद आता है कि गार्बियो में आपके पास

एक रिकार्ड प्लेयर हुआ करता था और संगीत

बजता होता था जब आप चित्र बनाते थे। अब

कहीं संगीत नहीं दीख पाता। यहां रिकार्ड प्लेयर

नहीं, ठीक उलट मुझे तो चित्र बनाते वक्त

संगीत से बड़ी दिकत होती है। मेरे ख्याल में मेरे

अंदर एक आंतरिक संगीत है जो मेरे लिए रिकार्ड

पर सने जाने वाले श्रेष्ठतम संगीत के मकाबले

अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह आंतरिक संगीत मेरे

लिए अत्यंत मूल्यवान है, यह मेरा अपना संगीत

है, यह मेरी धून है और मैं महसूस करता हं कि

यह खामोशी में सुना जा सकता है। मैं बिल्कल

शोर नहीं चाहता, रुकावरें नहीं चाहता। मैं अपने

प्रेमी के साथ हूं, अपने खयाल/विचार के साथ

हं। मैं महस्स करता हूं कि काम करते वक्त पूर्ण

एकाग्रता अनिवार्य है। मैंने पाया है कि अपने

तो है पर अब और आप उसे बजाते नहीं।

कि मेरी सारी वृत्तियां समन्वित हों, कि मैं चित्र को अपने आपको पूरा दे सकूं, कि प्रेम की अवस्था की तरह ही मेरा काम करना हो। कभी कभी जब एक कलाकार के जीवन की तलना कवि के जीवन से की जाती है तो यह विशेषकर टैजिक लगता है कि जबिक कवि के पास उसकी सारी कविताएं आजीवन रहती हैं. भले ही दूसरे उन्हें पढें और किताबें छपें, एक कलाकार के पास,

चीज की ओर इशारा कर रहा हं जो प्रकृति में खासकर जो सफल हो, उसका कुछ भी नहीं बचता जब तक कि वह सचेत भाव से उन्हें बेचने में मना न कर दे या भेंट न दे। आप नहीं जानते कि आपके चित्र कहां और कैसे लगे हैं और कैसे लगते हैं। यह कुछ ऐसा हैं जैसे आपके बच्चे जो जा चुके हैं और जिनकी कोई खबर नहीं, वे कहां हैं, क्या कर रहे हैं।

ऐसा ही होता है। लेकिन अत्यंत प्रामाणिक चित्रकारों के असंख्य उदाहरण हैं: वान गाँग ने अपनी परी जिंदगी में शायद एक छोड़ कोई भी चित्र नहीं बेचा, वह भी उसके भाई ने खरीदा था। और उसकी कलाकृतियां आज लाखों डालर के बराबर हैं। मेरे ख्याल में यह अवश्यंभावी देजेडी है। लेकिन इसका कोई बहुत अर्थ नहीं। महत्त्वपूर्ण बात सिर्फ यह है कि कवि, कलाकार या लेखक क्या व्यक्त करना चाहता है, अपने जीवनभर के अनुभव और कार्य के आधार पर। मुझे लगता है कि मुद्दत बाद संत तुकाराम की खोज हो पाई। ऐसे कवियों के उदाहरण हैं जिनकी कतियां जाद से ही बच पाईँ और बहत बाद में लोगों की निगाह में आ पाई।

मक्तिबोध अपने जीवन में एक भी कविता-संग्रह प्रकाशित न कर सके। और मेरा यह विचार है कि हमारे जीवन में मुक्तिबोध महत्त्वपूर्ण हैं। क्या उन्होंने यह नहीं कहा: 'चांद का मृंह टेढा है, 'इस तम शून्य में तैरती है जगत समीक्षा' और ऐसी अनेक चीजें जिन्हें मैं नहीं जानता। आपको क्या नहीं लगता कि यह महत्त्वपूर्ण है कि अन्य कवि जो ज्यादा सफल हैं और अखबारी हो गए, निर्ह्यक रहे जबकि मक्तिबोध का अस्तित्व बना रहा? वह अस्तित्व की एक अवस्था तक पहुंचे, वे थे, उन्होंने खामोशी की गूंजों को दर्ज किया। यह कर्तर्ड संभव है कि जितना ही कोई महान कलाकार या कवि अपने जीवन में सफलता से वंचित हो, उतना ही कोई सार्थक कलाकार या कवि अपने जीवन में ही प्रशंसित हो।

आप किसी नए रंग का आविष्कार या उसकी खोज कैसे करते हैं? जैसा आंपने कहा, वह क्या है जो पांच मल रंगों की ओर ले जाता है ? आप रंगों को कैसे ग्रहण करते हैं, एक रंग को दूसरे से कैसे मिलाते हैं या कैसे रंग की नई द्यूब उठाते हैं? क्या यह एक सचेत क्रिया है ? यह क्या कमोबेश उस सर्जनात्मक प्रक्रिया सी नहीं जिसमें आप उस किसी वस्त की ओर हाथ बढाते हैं जिसे अबतक नहीं जानते लेकिन जिसकी किसी अदृश्य कारण से तीव्र आवश्यकता अन्धव करते हैं?

मेरे अपने अनुभव में और पिछले कुछ बरसों में मैं जिस तरफ बढ़ रहा हूं, मेरे पास किसी चित्र

साथ एकांत पाता है. किसी शुन्य की अवस्था में नहीं बल्कि एकाग्र कर्म की अवस्था में, उन विचारों के साथ संबद्ध जो उससे उत्पन्न होते हैं। कला प्राय: आख्यान से इतर अन्य वस्त का संकेत करती है जो महत्त्वपूर्ण हैं. और ऐसा कविता में भी होता है। किंतु पूरी एकाग्रता आवश्यक है। यहां अतीत. वर्तमान और भविष्य मिलते हैं, जहां आनुवंशिक स्मृति, प्रजातीय अवचेतन, अपनी शिक्षा और प्रशिक्षण, आपकी रोजमर्रा की जिंदगी सब एक विचित्र और अनिर्वचनीय ढंग से एक साथ मिलते हैं और



संगीतकार कुमार गंधर्व पर विशेष पुस्तक के बाद अशोक वाजपेयी की नई किताब 'रजा' सुजन की दुनिया में एक अनुत्र आयोजन है। अंगरेजी में यह इसी हफ्ते लोकार्पित होने जा रही है और हिंदी में भी इसके जल्द सामने आने की उम्मीद है। दो कला-संवेदनाओं का यह संवाद एक रचनाकार का अपने अग्रज रचनाकार को नमन भी है और कला, समय और समाज के विचारोत्तेजक पहलुओं को एक सर्जक की नजर से समझने की कोशिश भी। विनय जैन द्वारा आकल्पिक और पेरिस के एवि कमार द्वारा प्रकाशित यह 'पोर्टफोलियो' एक संग्रहणीय दस्तावेज बन गया है: बातचीत के आलेख और दूसरी पठनीय सामग्री के साथ रक्ता की चुनिंदा कलाकृतियों के प्रिंट तो हैं ही, रजा के तीन मृत सिल्क स्क्रीन/लिथोग्राफ भी इसमें संजोये गए हैं।

आप जो कहना चाहते हैं, उसका सारतत्व रख पाते हैं। यह मुक्ति की शुद्ध अवस्था है जो शब्दातीत है। मझे पता है कि कभी-कभी आप सचेत हो जाते हैं पर सचेत होना इस गतिविधि के लिए बाधक है। मैं जानता हूं कि तर्क, बृद्धि अनुपस्थित नहीं। पर यह मुख्य क्रिया का गौण अंश है। वस्तुत:, मैं दोहराना चाहूंगा, चिंतन तो उच्चतम सर्जनात्मक क्रिया के लिए किसी न किसी प्रकार बाधक है।

आपकी सबसे बड़ी निराशाएं क्या थीं?

मझे सबसे अधिक निराशा, दुख के समान, १९४८ में हुई जब महात्मा गांधी की हत्या कर दी गई। यह एक व्यक्ति की करतूत थी जिसके अपने विश्वास थे। यह ठीक उस समय हुआ जब

नहीं कर सकता। हमें शन्य और हताशा का अत्यंत क्षोभ का अनुभव हुआ। मुझे याद है ये वहीं साल थे जब मैंने अपने माता-पिता को खोया। बचपन में हम राजनैतिक रूप से सचेत न थे। और अलग-अलग कारणों से, पिता के चलते हम किसी भी प्रकार की सामाजिक या राजनैतिक गतिविधि से दर ही रहे। लेकिन राष्ट्रीय गर्व की भावना थी, स्वतंत्र होने की इच्छा तो थी ही। महात्मा गांधी ने संपूर्ण राष्ट्र को शक्ति के एक अद्भुत स्रोत में परिणत कर दिया था। अपनी सारी ताकत के बाद भी अंग्रेजों को भारत छोडना पडा और यह आजाद हुआ। और तभी राष्ट्रपिता की हत्या कर दी गई। मैंने जीवन में इतने गहरे दर्द और पीड़ा का और किसी घटना के कारण नहीं अनुभव किया।

आपने कुछ जीवन मुल्यों का जिक्र किया है जिनसे आपको प्रेरणा मिली, ये जीवन-

अगर मैं ठींक समझ पाया हं तो जीवन मृल्य अंतत: मानवीय मूल्य हैं- मानवीय लगाव या ऊष्मा और यह बोध कि जीवन कितना असाधा रण है, कितना मूल्यवान और कितना अद्भुत। लेकिन मानवीय मस्तिष्क शायद ही उस ग्हस्यमय अस्तित्व का. जो कि हमारा जीवन और प्रकृति है, एक कतरा भी मुश्किल से समझ पाता है। जीवन-मूल्य ही मूलभूत हैं, कल्पना की उड़ान का, रचना का आधार जो आवश्यक है उसे परिभाषित करने का, सही-गलत को पहचा नने का पैमाना। जीवन के मुलभूत मुल्य वे हैं जो एक पुरुष और एक स्त्री मिलकर एक टीम की तरह, पुरकों की तरह विकसित करते हैं। तब क्या करना होता है जब दोनों के संयोग से संतानें उत्पन्न हों ? यह जरूरी होगा कि बच्चा जब आंखे खोले. चलना सीखे तब आप उसे चलने. देखने-बोलने में मदद करें। बच्चा, आश्चर्य के साथ दनिया को देखता है, समझने की कोशिश करता है कि भय क्या है, आहलाद क्या है, प्रेम क्या है, इत्यादि। मां यहां महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है लेकिन हम सब इस जीवन को मुल मानवीय स्रोत की तरह ग्रहण कर सकते हैं जो न सिर्फ बच्चों को बढ़ाने में मदद करता है बल्कि परिपक्वता के हमारे दौर से हमें मुल्यों का सही पैमाना चुनने में मदद करता है, उन्हें स्थापित करने और उनके मुताबिक जीवन जीने में सहायता करता है। हमारे रोजमर्रा के जीवन में प्राणी जीवन में, मानवीय जीवन में व्यक्त होने वाली इस अमूल्य प्रकृति से ही एक-दूसरे के लिए प्रेम, मानवीय लगाव उत्पन्न होता है। आप जिंदगी से, प्रकृति से कहीं अधिक सीख सकते हैं तथाकथित किताबों के मुकाबले।

भारत में पिछले कुछ समय से, कम से कम बौद्धिक और रचनात्मक समुदाय में, धर्मीन रपेक्षता का प्रभृत्व है। भारत एक धर्मनिर पेक्ष राज्य है, जिसका तात्पर्य यह है कि राज्य का अपना कोई धर्म नहीं या इसे किसी धर्म को समर्थन या प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। दूसरी तरफ धर्मनिरपेक्षता का अर्थ सारे धर्मों के प्रति समान आदर भी है. लेकिन सभी धर्मों के प्रति समादर वाली यह मान्यता पीछे ढकेल दी गई है। एक धर्मनिरपेक्ष व्यक्ति का तात्पर्यं, भारत में ऐसे व्यक्ति से हो गया है जो धार्मिक संवे दना को खासे संदेह से देखता है। चाहे हिंद हो या मुसलमान या सिख, सारी बुनियादप

से नहीं। इसके असंख्य दूसरे कारण हैं जो हमारे आज के समाज की रचना करते हैं या हमारी परी दिनया की, जहां हमारे सभी मुल्यों और बोध के ऊपर भौतिक चिंताएं हावी खती हैं। मेरा ख्याल है कि फ्रांस और यूरोप के मामले में- यहां तक कि अमेरिका में भी- धार्मिक भावना और धर्म के प्रति लगाव में आती कमी पिछले पचास बरम से तो देखी ही जा सकती है। रूस और विश्व भर में एक बड़ी हद तक कम्यनिस्ट विचारधाग्र के प्रभत्वशाली दौर में यह यथार्थ था और समस्या भी। जैसे-जैसे मैं लोगों पर गौर करता है, इस विचार के करीब होता जाता हं कि धार्मिक विचा यें और चिंतन में दिलचस्पी बढ़ रही है और विभिन्न धर्मों के- महत्त्वपूर्ण धर्मों के- मुल्य जीवन के लिए शाश्वत महत्त्व के साबित हो खे हैं। मझे लगता है कि ऐसा ही भारत या किसी भी और देश में होगा। गार्बियो या मान्तों के इस छोटे से गांव के ही लोगों को देखिए जो हर इतवार 'मास' के लिए या दूसरे मजहबी त्योहारों के लिए बढ़ती तादाद में बार-बार आते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह धर्म मानवीय हृदय और मस्तिष्क की किसी अत्यंत मूलभूत महत्त्वपूर्ण वस्तु से संबद्ध है। मैं न्युयार्क के एक कैथेडल के अपने अनुभव के बारे में बताऊं। जब मैं वहां गया तो मुझे 'क्यु' में खड़ा रहना पड़ा। मैं इसे लेकर एकदम आश्वस्त हं कि नात्रेदाम और लव में जो दिनया के सबसे बड़े संग्रहालयों में एक है, कोई भी सावधान दर्शक उन कलाकृतियों को जरूर देखेगा जो धार्मिक विचारों के विषय पर बनाई गई हैं। धार्मिक विश्वासों और शिक्षाओं ने यरो पीय कला इतिहास की कुछ सर्वश्रेष्ठ कला अभिव्यक्तियों को जन्म दिया है। यही बात भारत के प्रसंग में भी सही है। धर्म असंख्य कलाकारों या श्रेष्ठ कलाकतियों के लिए उत्प्रेरक रहा है. चाहे वे गुफाओं में मिलें या महलों में। कागज पर कैनवास पर, कांसे में, पत्थरों पर उत्कीर्ण महान कृतियां। ईमानदारी से कहं तो मैंने निजी तौर पर यह पाया है कि जीवन के अनेक स्तरों और अनेक ानेक कोटियों से होते हुए जीवन के विकासक्रम में, पशुओं के स्तर से उच्चतर स्तर तक हम एक-एक अवस्था पार कर ही बढ़ते है। और सबसे महत्त्वपूर्ण अवस्था में एक खास आध्यात्मिक परीक्षा देनी पड़ती है जो हम सबके धार्मिक विश्वास द्वारा ली जाती है। मेरे विचार से यह संभव है और मैं खुद अपने मामले में कोशिश कर रहा हूं कि भारत में मुख्यत: कम से कम तीन धर्मों के बीच के समानतत्त्व की तलाश की जाए। और चाहे जो हो, खुद मैं अपनी चेतना के स्तर पर हिंदू धर्म और ईसाई धर्म से प्रभावित रहा। मेरी समझ में यह सोचना मुमकिन है कि ऐसे मूलभूत मूल्य होते हैं जिन्हें इस प्रकार का भौति

नग्पेक्ष अवधारणा बरसों से प्रभुत्वशाली रही है।

मुझे इस बात की खुशी है कि भारत धर्मनिरपेक्ष

है। अगर धर्म के प्रति विमखता है तो इस वजह

नहीं कर सकता। वे तब भी अप्रासांगिक नहीं हुए जब दुनिया के अनेक हिस्सों, यहां तक कि भारत के अत्या धक बौद्धिक संवर्ग में भी मार्कसवाद प्रभाव शाली था। मैं महसूस करता हूं कि यह बिल्ककुल संभव है और निजी तौर पर मैं अपने बारे में बोल सकता हं कि प्रार्थना, धर्म और जीवन-मूल्यों की एक सर्वव्यापी सार्वभौम अवधारणा विकसित

कवादी युग, जिसमें हम रह रहे हैं बहार कर किनारे